[2022] 5 एस. सी. आर. 629

क.

कामाची

वी.

लक्ष्मी नारायणन

(2022 की आपराधिक अपील संख्या 627) अप्रैल 13,2022

[उदय उमेश ललित और

पामिदिघंतम श्री नरसिम्हा**,** जे**.** जे**.]**

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005।12 और 31-अपीलार्थी-पत्नी के आवेदन से उत्पन्न होने वाली कार्यवाही।12 एस. एस. के संदर्भ में संरक्षण की मांग करते हुए वर्ष 2018 में अधिनियम।17 और अधिनियम की धारा 18-प्रत्यर्थी-पति की याचिका।482 सी. आर. पी. सी.-उच्च न्यायालय ने उस एस. एस. को सीमित करने के आधार पर कार्यवाही को रद्द कर दिया।28 और घरेलू हिंसा अधिनियम आर/डब्ल्यूआर के 32।15(6) घरेलू हिंसा नियमों ने दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को लागू किया और इसलिए, अपीलार्थी को यू/एस आवेदन दायर करना चाहिए था।12 घटना की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर और चूंकि अपीलार्थी ने वर्ष 2008 में वैवाहिक घर छोड़ दिया था, इसलिए आवेदन अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग था-चाहे आवेदन यू/एस को पसंद करता हो।12 उच्च न्यायालय द्वारा सीमा की अवधि की गणना के लिए अधिनियम पर उचित रूप से विचार किया गया था-आयोजितःअधिनियम के प्रावधानों में यू/एस के तहत आवेदन दायर करने पर विचार किया गया है।12 संबंधित मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही शुरू करना-दोनों पक्षों को सुनने के बाद और रिकॉर्ड पर सामग्री को ध्यान में रखने के बाद, मजिस्ट्रेट यू/एस के तहत एक उचित आदेश पारित कर सकता है।12 अधिनियम का-यह केवल ऐसे आदेश का उल्लंघन है जो एक अपराध का गठन करता है जो एस से स्पष्ट है।31 अधिनियम का-इस प्रकार, यदि अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में कोई अपराध किया जाता है, तो सीमा निर्धारित की जाती है।468 सी. आर. पी. सी. इस तरह के अपराध की तारीख से लागू होगी-उस समय तक जब एस. के तहत एक आवेदन को प्राथमिकता दी जाती है।12 अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में कोई अपराध नहीं किया गया है और इस प्रकार आवेदन की तारीख से सीमा के लिए कोई प्रारंभिक बिंदु नहीं होगा। 12 अधिनियम का-सीमा के लिए ऐसा प्रारंभिक बिंदु केवल और केवल यू/एस द्वारा पारित आदेश के उल्लंघन के बाद ही उत्पन्न होगा।12 अधिनियम का-तथ्यों पर, उच्च न्यायालय ने गलत तरीके से आवेदन दायर करने की बराबरी की।12 शिकायत दर्ज करने या अभियोजन शुरू करने के लिए अधिनियम-उच्च न्यायालय ने यह देखने में गलती की थी कि आवेदन यू/एस।12 ए का

ग

डी.

ई.

च

जी.

एच.

अधिनियम को घरेलू हिंसा के कथित कृत्यों के एक वर्ष की अवधि के भीतर दायर किया जाना चाहिए था-प्रतिवादी-पति को दो सप्ताह के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष अपना जवाब दाखिल करना चाहिए और इसके बाद मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम-सीमा-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के प्रावधानों के संदर्भ में मामले पर विचार किया जाना चाहिए।468, 482 – घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण नियम 2006।इंदरजीत सिंह ग्रेवाल बनाम पंजाब राज्य और

दूसरा (2011) 12 एस. सी. सी. 588:[2011] 10 एससीआर 557 और

कृष्ण भट्टाचार्जी बनाम सारथी चौधरी **(2016)**

एससीसी **705:[2015] 14** एससीआर **65-**प्रतिष्ठित।

सारा मैथ्यू बनाम हृदय संवहनी रोग संस्थान

ग

(2014) 2 एस**.** सी**.** सी **62:[2013] 12** एससीआर **674-**समझाया गया।

अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल **(2004) 7** एस**.** सी**.** सी**. 338 -**

अप्रयोज्य रखा गया।

डॉ. पी. पद्मनाथन और अन्य बनामटीएमटी। वी. मोनिका और एनर।

डी.

2021 एससीसी ऑनलाइन मैड 8731; कृष्णा पिल्लई बनाम टी. ए. राजेंद्रन और एन. आर. 1990 (पूरक) एससीसी 121; भारत

दामोदर काले और अन्न बनामआंध्र प्रदेश राज्य **(2003) 8** एस**.** सी**.** सी**. 559** और जापानी साहू बनाम चंद्र शेखर

मोहंती **(2007) 7** एससीसी **394:[2007] 8** एस**.** सी**.** आर**. 582-**संदर्भित।

ई.

निर्णीत विधि संदर्भ

[2013] 12 एससीआर **674**

समझाया।

पैरा **9 (2004) 7** एस**.** सी**.** सी**. 338** अप्रयोज्य पैरा **9 (1990)** सप**.**एस**.** सी**.** सी**. 121** संदर्भित

पैरा **12**

च

(2003) 8 एस**.** सी**.** सी**. 559**

संदर्भित किया गया है

पैरा **12**

[2007] 8 एससीआर **582**

संदर्भित किया गया है

पैरा **12**

[2011] 10 एससीआर **557**

प्रतिष्ठित

पैरा **16**

जी.

[2015] 14 एससीआर **65**

प्रतिष्ठित

पैरा **17**

आपराधिक अपील क्षेत्राअधिकार : 2022 की आपराधिक अपील संख्या 627।

2018 के Crl.O.P. No.28924 में मद्रास में उच्च न्यायालय के 16.03.2020 के निर्णय और आदेश से।

एच.

631

कामतची बनाम लक्ष्मी नारायण ए

क.

शरत चंद्रन, श्याम गोपाल, सुश्री डी. दुर्गा देवी, मणि भूषण सिन्हा, प्रणब प्रकाश, अधिवक्ता।अपीलार्थी के लिए।

सिद्धार्थ दवे, वरिष्ठ अधिवक्ता, निखिल सिंगला, विधि ठाकर, गगन गुप्ता, अधिवक्ता।उत्तरदाता के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

उदय उमेश ललित**,** जे।

1 . अनुमति प्रदान की गई.

2. यह अपील सीआरएल में उच्च न्यायालय 1 द्वारा पारित अंतिम निर्णय और दिनांक 16.03.2020 के आदेश को चुनौती देती है। 2018 का ओ. पी. सं. 28924। 3.वर्तमान कार्यवाही अपीलार्थी द्वारा घरेलू हिंसा से महिलाओं के संरक्षण अधिनियम, 2005 (जिसे इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया गया है) की धारा 12 के तहत दायर एक आवेदन से उत्पन्न होती है, जिसे न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बत्तूर, चेन्नई के न्यायालय में 2018 के डी. वी. सी. <आई. डी. 1 के रूप में क्रमांकित किया गया था।आवेदन अधिनियम की धारा 17 और 18 के संदर्भ में उचित सुरक्षा की मांग करते हुए दायर किया गया था और प्रतिवादी-पति के साथ-साथ अपीलार्थी के ससुर और साली के खिलाफ प्राथमिकता दी गई थी।सुरक्षा अधिकारी ने अपनी घरेलू निरीक्षण रिपोर्ट दिनांक 21.08.2018 के माध्यम से घरेलू हिंसा की घटनाओं को निम्नानुसार सारणीबद्ध कियाः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

ग

डी.

“4. घरेलू हिंसा की घटनाएंः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

ई.

च

जी.

1 मद्रास में उच्च न्यायालय

एच.

ग

डी.

ई.

च

संरक्षण अधिकारी की रिपोर्ट से निकाले गए बुनियादी आरोप इस प्रकार थेः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

“मेरा नाम कामाक्षी है।मेरे और मेरे पति के बीच शादी 07.09.2007 पर संपन्न हुई।दहेज, जो मेरी शादी को दिया गया था, 60 संप्रभु सोना, साढ़े चार किलो चांदी, Rs.50,000/- और अन्य घरेलू सामान मेरे पति के घर में रखे गए थे।मेरे माता-पिता ने रुपये खर्च किए। शादी के लिए 15 लाख।शादी से पहले, मेरे पति के परिवार के सदस्य निमंत्रण देने के लिए हमारे घर आए और मानसिक तनाव दिया और कहा कि गहने और दहेज पर्याप्त नहीं हैं।मेरे पिता ने कर्ज लिया था और शादी के इरादे से शादी सुचारू रूप से होनी चाहिए।शादी के अगले दिन के बाद, वे ए

जी.

एच.

उन्होंने मेरे और मेरे माता-पिता के प्रति अपमानजनक तरीके से बात करते हुए कहा कि पर्याप्त गहने और घरेलू चीजें नहीं दी गई थीं।उन्होंने कई चालें चलाईं क्योंकि मैं अपने पति के साथ लंदन नहीं जाऊंगा और उन्होंने मुझे प्रताड़ित किया।मैंने 06.09.2008 पर एक लड़के को जन्म दिया।मेरे पति के परिवार के सदस्य पुण्यथानम समारोह के लिए आए और अपमानजनक बात की क्योंकि यह हमारा उत्तराधिकारी नहीं है और उन्होंने बच्चे को स्वीकार करने से इनकार कर दिया।मैंने अपने पति के साथ रहने के लिए कई मामलों को प्राथमिकता दी।मैं उच्च न्यायालय के आदेश के साथ अपने पति के घर गया। राजेश्वरी ने मुझे और मेरे बच्चे को अनुमति नहीं दी और अपमानजनक तरीके से बात की और हमें बाहर निकाल दिया और मुझे कहीं जाने और मरने के लिए कहा।"

ग

4. इसके तुरंत बाद, अपीलार्थी के ससुर और साली ने उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में संहिता) की धारा 482 के तहत 2018 का Crl.O.P.No.27097 दायर किया, जिसमें अधिनियम के तहत कार्यवाही को रद्द करने की मांग की गई थी। 2018 का Crl.O.P. No.28924 प्रत्यर्थी-पति द्वारा संहिता की धारा 482 के तहत समान राहत की मांग करते हुए दायर किया गया था।उक्त मूल याचिका में प्रत्यर्थी द्वारा लिए गए मुख्य आधार थेः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

डी.

“ई. यह प्रस्तुत किया जाता है कि याचिकाकर्ताओं को किसी भी सामग्री या संभावनाओं या वास्तविक उदाहरण पर मुकदमे की अग्निपरीक्षा का सामना करने के लिए मजबूर किया जाता है, इस प्रकार, याचिकाकर्ता के खिलाफ 2018 की डी. वी. संख्या 21 में विवादित कार्यवाही अवैध, अनुचित है और यह कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग के अलावा और कुछ नहीं है और इसलिए इसे रद्द किया जा सकता है।

ई.

एफ. याचिकाकर्ता प्रस्तुत करता है कि प्रत्यर्थी के कहने पर एक वैवाहिक विवाद को आपराधिक रंग देने की मांग की जाती है। याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप कानूनी रूप से अस्थिर हैं और जहां तक याचिकाकर्ता का संबंध है, कार्यवाही को आगे बढ़ाने की अनुमति देने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा।इसलिए, उस आधार पर, विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बत्तूर की फाइल पर 2018 के डी. वी. No.21 में याचिकाकर्ता/प्रतिवादी के खिलाफ कार्यवाही रद्द की जा सकती है।"

च

जी.

5. दोनों मूल याचिकाएँ 16.03.2020 पर उच्च न्यायालय के समक्ष आईं।

उ. ससुर और साली द्वारा दायर याचिका को अनुमति दी गई और उनके खिलाफ कार्यवाही को रद्द कर दिया गया।उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी कीः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

एच.

“5. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बत्तूर की फाइल पर 2018 के डी. वी. <आई. डी. 1 में कार्यवाही को रद्द करने के लिए इच्छुक है, जहां तक याचिकाकर्ताओं का संबंध है, इस शर्त पर कि वे यह सुनिश्चित करेंगे कि प्रतिवादी का ए. 1/पति प्रत्येक अंग्रेजी कैलेंडर महीने की 5 तारीख से पहले 5,000 रुपये (केवल पांच हजार रुपये) की

राशि 2018 के डी. वी. <आई. डी. 1 की जमा राशि में, न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बत्तूर की फाइल पर, दोनों पक्षों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, अंतरिम रखरखाव के रूप में जमा करेगा, जिसमें विफल रहने पर यह आदेश स्वचालित रूप से रद्द हो जाएगा।इस तरह की जमा राशि जमा किए जाने पर, प्रत्यर्थी को इसे वापस लेने का अधिकार है।

ग

6. जहां तक प्रत्यर्थी के ए 1/पति का संबंध है, चूंकि 2018 के आई. डी. 1 में विवादित कार्यवाही वर्ष 2018 से लंबित है, इसलिए निचली अदालत को इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर मुकदमा पूरा करने का निर्देश देना उचित होगा।ए 1/प्रत्यर्थी के पति को अगली सुनवाई की तारीख पर विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है, जिसमें विफल रहने पर, प्रत्यर्थी को इस न्यायालय से संपर्क करने की स्वतंत्रता होती है।"

डी.

बी. हालांकि, प्रतिवादी द्वारा दायर याचिका के संबंध में, उच्च न्यायालय ने यह विचार लिया कि आवेदन घटना के एक साल के भीतर दायर किया जाना चाहिए था और चूंकि अपीलार्थी ने वर्ष 2008 में वैवाहिक घर छोड़ दिया था, इसलिए आवेदन अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग था।किए गए प्रासंगिक अवलोकन इस प्रकार थेः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

ई.

“5. विचार के लिए एकमात्र बिंदु सीमा है।इस संबंध में इंद्रजीत सिंह के मामले में फैसले पर भरोसा करना प्रासंगिक है।

ग्रेवाल बनाम पंजाब राज्य और ए**.** एन**.** आर**., 2012** में रिपोर्ट किया गया।

च

309. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 की धारा 28 और 32 घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण नियम 2006 के नियम 15 (6) के तहत दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को लागू करती है।इसलिए, प्रतिवादी को घटना की तारीख से एक साल की अवधि के भीतर शिकायत दर्ज करानी चाहिए थी।

जी.

6. मामले में, प्रतिवादी ने वर्ष 2008 में ही वैवाहिक गृह छोड़ दिया, उसके बाद, याचिकाकर्ता और प्रतिवादी के खिलाफ उनके पारिवारिक विवादों के संबंध में कई कार्यवाही लंबित हैं।याचिकाकर्ता को ए राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था

एच.

635

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

2013 के एम. सी. <आई. डी. 2 में प्रतिबादी को Rs.30,000/- और नाबालिग बेटे को भरण-पोषण के रूप में Rs.15,000/- की राशि दी गई है और इसे 2018 के Crl.R.C.No.567 में इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है और याचिकाकर्ता इसमें प्रतिबादी को लगातार भरण-पोषण का भुगतान कर रहा है।

7. इसलिए, सीमा के आधार पर, पूरी शिकायत और कुछ नहीं बल्कि अदालत की प्रक्रिया का स्पष्ट दुरुपयोग है और इसे याचिकाकर्ता के खिलाफ कायम नहीं रखा जा सकता है।"

6. इन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी द्वारा दायर याचिका को अनुमति देने वाले आदेश के खिलाफ अपीलार्थी द्वारा तत्काल अपील को प्राथमिकता दी जाती है।7. हमने अपील के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता श्री शरत चंद्रन और प्रतिवादी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ दवे को सुना है।

ग

8. विद्वान अधिवक्ता श्री शरत चंद्रन प्रस्तुत करते हैंः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

क) संहिता की धारा 468 के तहत निर्धारित सीमा अन्य बातों के साथ-साथ यह मानती है कि अपराध करने के एक साल से अधिक समय बाद न्यायालय द्वारा कोई संज्ञान नहीं लिया जाना चाहिए।इस प्रकार, सीमा की गणना अपराध करने की तारीख से की जानी चाहिए।

डी.

ख) अधिनियम की धारा 12 अधिनियम के तहत एक या अधिक राहत की मांग करने वाले आवेदन को दायर करने की बात करती है, जिसके बाद मजिस्ट्रेट द्वारा किसी भी घरेलू घटना रिपोर्ट सहित प्रासंगिक सामग्री पर विचार किया जाता है।इसके बाद मामले की सुनवाई उप-धारा (4) के संदर्भ में की जाती है और अंत में आवेदन पर आदेश दिया जा सकता है।

ई.

ग) जैसा कि अधिनियम की धारा 31 में निर्धारित किया गया है, अधिनियम की धारा 12 के तहत पारित आदेश का कोई भी उल्लंघन किसी भी विवरण के कारावास से दंडनीय है जो एक वर्ष तक बढ़ सकता है, या जुर्माने से, या दोनों से दंडनीय है।इस प्रकार, अधिनियम की धारा 31 के तहत अपराध को अधिनियम की धारा 12 के तहत पारित आदेश का उल्लंघन होने के बाद ही किया गया कहा जाएगा।

च

जी.

घ) संहिता के तहत या अधिनियम के प्रावधानों के तहत आवेदन दायर करने की कोई सीमा नहीं है और इस तरह, उच्च न्यायालय का यह कहना सही नहीं था कि कार्यवाही सीमितता से बाधित थी।

एच.

ङ) उच्च न्यायालय द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया था, वे पूरी तरह से अलग थे।रिलायंस को एकल के निर्णय पर रखा गया था

डॉ. पी. पद्मनाथन और अन्य बनाम में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशटीएमटी। वी. मोनिका और एनर। 2.

9. प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ दवे प्रस्तुत करते हैंः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

i) संरक्षण अधिकारी द्वारा अपनी रिपोर्ट में तैयार किए गए सारणीबद्ध चार्ट से संकेत मिलता है कि लगभग 10 वर्षों के बाद प्रतिवादी या ससुर या साली के खिलाफ कुछ भी आरोप नहीं लगाया गया था।

(ii) पक्षकार पिछले कई वर्षों से अलग रह रहे थे और आवेदन कानून की अदालत में प्रतिवादी के खिलाफ कुछ दर्ज करने के एक हताश प्रयास के अलावा और कुछ नहीं था; और स्पष्ट रूप से अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग था।

iii) सारा मैथ्यू बनाम हृदय संवहनी रोग संस्थान 3 के मामले में इस न्यायालय के कथन के अनुसार, सीमा की अवधि की गणना के लिए प्रारंभिक बिंदु आवेदन की तारीख से होना चाहिए और इस तरह, उच्च न्यायालय को यह टिप्पणी करने में उचित ठहराया गया कि कार्रवाई समय द्वारा बाधित थी।

डी.

लिखित प्रस्तुतियों में यह भी प्रस्तुत किया जाता है किः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

ई.

"अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल **4** में यह माननीय न्यायालय

अभिनिर्धारित किया कि यदि कोई मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान लेता है, तो आरोपी के खिलाफ कोई आरोप लगाए बिना या आरोपी को शामिल करने वाली कोई सामग्री या धारा 200 और 202 के प्रावधानों के उल्लंघन में प्रक्रिया जारी करता है, तो मजिस्ट्रेट के आदेश को दूषित किया जा सकता है।हालाँकि, एक पीड़ित अभियुक्त उस स्तर पर जो राहत प्राप्त कर सकता है, वह संहिता की धारा 203 को लागू करके नहीं है, क्योंकि संहिता किसी आदेश की समीक्षा पर विचार नहीं करती है।इसलिए अधीनस्थ आपराधिक न्यायालयों के साथ किसी भी समीक्षा शक्ति या अंतर्निहित शक्ति के अभाव में, उपाय संहिता की धारा 482 को लागू करने में निहित है।"

च

जी.

10. प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करने से पहले, अधिनियम की धारा 12,28,31 और 32 जैसे प्रासंगिक प्रावधानों को निकाला जा सकता हैः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

2 2021 एससीसी ऑनलाइन मैड 8731। 3 (2014) 2 एससीसी 62।

एच.

4 (2004) 7 एससीसी 338।

637

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

क.

"12. मजिस्ट्रेट को आवेदन।**—**

(1) पीड़ित व्यक्ति की ओर से कोई पीड़ित व्यक्ति या सुरक्षा अधिकारी या कोई अन्य व्यक्ति इस अधिनियम के तहत एक या अधिक राहत की मांग करते हुए मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन प्रस्तुत कर सकता हैः

बशर्ते कि ऐसे आवेदन पर कोई आदेश पारित करने से पहले, मजिस्ट्रेट सुरक्षा अधिकारी या सेवा प्रदाता से प्राप्त किसी भी घरेलू घटना की रिपोर्ट पर विचार करेगा।

(2) उप-धारा (1) के तहत मांगी गई राहत में प्रतिवादी द्वारा की गई घरेलू हिंसा के कृत्यों से हुई चोटों के लिए मुआवजे या नुकसान के लिए मुकदमा दायर करने के ऐसे व्यक्ति के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना मुआवजे या नुकसान के भुगतान के लिए आदेश जारी करने के लिए राहत शामिल हो सकती हैः

ग

बशर्ते कि जहां किसी न्यायालय द्वारा पीड़ित व्यक्ति के पक्ष में मुआवजे या हर्जाने के रूप में किसी राशि के लिए डिक्री पारित की गई है, वहां इस अधिनियम के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा दिए गए आदेश के अनुसरण में भुगतान की गई या देय राशि, यदि कोई हो, ऐसी डिक्री के तहत देय राशि के खिलाफ निर्धारित की जाएगी और डिक्री, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5), या उस समय लागू किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, ऐसी छूट के बाद बची हुई शेष राशि, यदि कोई हो, के लिए निष्पादन योग्य होगी।(3) उप-धारा (1) के तहत प्रत्येक आवेदन ऐसे प्रपत्र में होगा और उसमें ऐसे विवरण होंगे जो निर्धारित किए जाएं या जितना संभव हो उतने निकट हों।

डी.

ई.

(4) मजिस्ट्रेट सुनवाई की पहली तारीख तय करेगा, जो आम तौर पर अदालत द्वारा आवेदन प्राप्त होने की तारीख से तीन दिन से अधिक नहीं होगी।

च

(5) मजिस्ट्रेट अपनी पहली सुनवाई की तारीख से साठ दिनों की अवधि के भीतर उप-धारा (1) के तहत किए गए प्रत्येक आवेदन का निपटारा करने का प्रयास करेगा।

जी.

28. प्रक्रिया।—

(1) इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित को छोड़कर, धारा 12,18,19,20,21,22 और 23 के तहत सभी कार्यवाहियां और धारा 31 के तहत अपराध दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के प्रावधानों द्वारा शासित होंगे।

एच.

(2) उप-धारा (1) की कोई भी बात न्यायालय को धारा 12 के तहत या धारा 23 की उप-धारा (2) के तहत किसी आवेदन के निपटारे के लिए अपनी प्रक्रिया निर्धारित करने से नहीं रोकेगी।

31. प्रत्यर्थी द्वारा संरक्षण आदेश के उल्लंघन के लिए दंड।—

(1) प्रत्यर्थी द्वारा संरक्षण आदेश या अंतरिम संरक्षण आदेश का उल्लंघन इस अधिनियम के तहत एक अपराध होगा और एक वर्ष तक की अवधि के लिए किसी भी प्रकार के कारावास या बीस हजार रुपये तक के जुर्माने या दोनों से दंडनीय होगा।

(2) उप-धारा (1) के तहत अपराध का मुकदमा उस मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाएगा जिसने आदेश पारित किया था, जिसका उल्लंघन आरोपी द्वारा किया गया है।(3) उप-धारा (1) के तहत आरोप तय करते समय, मजिस्ट्रेट भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 498 ए या उस संहिता के किसी अन्य प्रावधान या दहेज निषेध अधिनियम, 1961 (1961 का 28) के तहत भी आरोप तय कर सकते हैं, यदि तथ्य उन प्रावधानों के तहत किसी अपराध के होने का खुलासा करते हैं।

ग

डी.

32. संज्ञान और प्रमाण।—

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में कुछ भी निहित होने के बावजूद, धारा 31 की उप-धारा (1) के तहत अपराध संज्ञेय और गैर-जमानती होगा।

ई.

(2) व्यथित व्यक्ति की एकमात्र गवाही पर, न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि अभियुक्त द्वारा धारा 31 की उप-धारा (1) के तहत अपराध किया गया है।"

च

11. इसी तरह, संहिता की धारा 468 भी सुविधा के लिए निर्धारित की गई हैः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

“468.सीमा की अवधि समाप्त होने के बाद संज्ञान लेने पर रोकः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

(1) इस संहिता में अन्यथा प्रावधान किए जाने के अलावा, कोई भी न्यायालय सीमा की अवधि समाप्त होने के बाद, उप-धारा (2) में निर्दिष्ट श्रेणी के अपराध का संज्ञान नहीं लेगा।(2) सीमा की अवधि होगी -

जी.

(क) छह माह, यदि अपराध केवल जुर्माने से दंडनीय है (ख) एक वर्ष, यदि अपराध एक वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय है; क

एच.

(ग) तीन वर्ष, यदि अपराध एक वर्ष से अधिक लेकिन तीन वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय है।(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, उन अपराधों के संबंध में सीमा की अवधि, जिन पर एक साथ मुकदमा चलाया जा सकता है, उस अपराध के संबंध में निर्धारित की जाएगी जो अधिक कठोर दंड या, जैसा भी मामला हो, सबसे कठोर दंड से दंडनीय है।"12. संहिता की धारा 468 के संदर्भ में, उप-धारा 2 में निर्दिष्ट श्रेणियों के अपराध का संज्ञान उसमें निर्दिष्ट अवधि की समाप्ति के बाद नहीं लिया जा सकता है।

निम्नलिखित मामलों में, अपराध करने का आरोप लगाने वाली शिकायतें समय पर दायर की जाती थीं ताकि निर्धारित अवधि के भीतर संज्ञान लिया जा सके, लेकिन मजिस्ट्रेट द्वारा निर्धारित अवधि की समाप्ति के बाद मामलों पर विचार किया जाता था, और इस तरह प्रत्येक मामले में संज्ञान निर्धारित अवधि की समाप्ति के बाद लिया जाता था।

ग

(क) कृष्ण पिल्लई बनाम टी. ए. राजेंद्रन और अन्न मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ। 5, बाल विवाह प्रतिबंध अधिनियम, 1929 की धारा 9 पर विचार करते हुए, जो यह आदेश देता है कि किसी भी न्यायालय को उस दिन से एक वर्ष की समाप्ति के बाद किसी अपराध का संज्ञान नहीं लेना चाहिए जब अपराध कथित रूप से किया गया था।- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

डी.

“3. यह विवादित नहीं है कि अपराध किए जाने के एक साल से अधिक समय बाद अदालत द्वारा संज्ञान लिया गया है। प्रत्यर्थियों के वकील ने कहा है कि चूंकि शिकायत अपराध के एक साल के भीतर दायर की गई थी, इसलिए यह लिया जाना चाहिए कि अदालत ने उस तारीख को संज्ञान लिया है जब शिकायत दर्ज की गई थी।मामले के उस दृष्टिकोण में कोई सीमा नहीं

होगी।4. संज्ञान लेना हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र में एक विशेष अर्थ रखता है।हम पाँच लोगों द्वारा लिए गए दृष्टिकोण का उल्लेख कर सकते हैं।

ई.

च

ए. आर. अंतुले बनाम रामदास श्रीनिवास मामले में इस न्यायालय की न्यायाधीश पीठ

नायक 6.पी.530 (रिपोर्ट के पैरा 31) में इस न्यायालय ने संकेत दिया:"जब कोई निजी शिकायत दायर की जाती है, तो अदालत को धारा 200 Cr.P.C के परंतुक में निर्धारित मामलों को छोड़कर शपथ पर शिकायतकर्ता से पूछताछ करनी होती है। शपथ पर शिकायतकर्ता से पूछताछ करने और उपस्थित गवाहों से पूछताछ करने के बाद, यदि कोई हो, जिसका अर्थ है कि -

जी.

5 1990 (सप.) एससीसी 121।

6 (1984) 2 एससीसी 500:1984 एससीसी (सीआरआई) 277

एच.

640

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2022] 5 एस सी आर।

उपस्थित नहीं होने वाले गवाहों से पूछताछ करने की आवश्यकता नहीं है, यह अदालत के लिए न्यायिक रूप से निर्धारित करने के लिए खुला होगा कि क्या कोई मामला जारी करने की प्रक्रिया के लिए बनाया गया है।जब यह कहा जाता है कि अदालत ने प्रक्रिया जारी की है, तो इसका मतलब है कि अदालत ने अपराध का संज्ञान लिया है और कार्यवाही शुरू करने का फैसला किया है और संज्ञान लेने की प्रक्रिया का एक दृश्य प्रकटीकरण जारी किया जाता है जिसका अर्थ है कि आरोपी को अदालत के समक्ष पेश होने के लिए कहा जाता है।""

(ख) भारत में दामोदर काले और अन्र बनामआंध्र राज्य

प्रदेश 7 में एक वर्ष के भीतर शिकायत दर्ज की गई थी, लेकिन एक वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद संज्ञान लिया गया था। शिकायतकर्ता ने समय के भीतर संपर्क किया था और देरी अदालत के एक अधिनियम के कारण हुई थी, जिस पर अभियोजन एजेंसी या शिकायतकर्ता का कोई नियंत्रण नहीं था।इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ ने कहा कि "कुछ अपराधों का संज्ञान लेने की सीमा" को उस दिन से माना जाना चाहिए जब शिकायत दर्ज की गई थी या कार्यवाही शुरू की गई थी।इस मुद्दे पर चर्चा इस प्रकार थी:- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

ग

डी.

"10. इस मामले के तथ्यों और हमारे समक्ष प्रस्तुत तर्कों के आधार पर, हम इस प्रश्न का निर्णय करना उचित समझते हैं कि क्या संहिता के अध्याय XXXVI के प्रावधान अभियोजन की स्थापना में देरी या संज्ञान लेने में देरी पर लागू होते हैं।जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अपीलार्थियों के विद्वान वकील के अनुसार, उपरोक्त अध्याय के तहत निर्धारित सीमा संबंधित न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने पर लागू होती है, इसलिए भले ही कोई शिकायत संहिता के उक्त अध्याय में उल्लिखित सीमा की अवधि के भीतर दायर की जाती है, यदि संज्ञान सीमा की अवधि के भीतर नहीं लिया जाता है तो वह सीमा द्वारा वर्जित हो जाता है।यह तर्क संहिता के अध्याय XXXVI के अध्याय शीर्षक से प्रेरित प्रतीत होता है जो इस प्रकार है:"कुछ अपराधों का

संज्ञान लेने की सीमा।यह मुख्य रूप से अध्याय के शीर्षक की उपरोक्त भाषा पर आधारित है, यह तर्क अपीलार्थियों की ओर से संबोधित किया जाता है कि उक्त अध्याय द्वारा निर्धारित सीमा संज्ञान लेने और शिकायत दर्ज करने या अभियोजन शुरू करने पर लागू नहीं होती है।हम इस तरह के तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि उक्त अध्याय के विभिन्न प्रावधानों का संचयी अध्ययन स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि उसमें निर्धारित सीमा केवल शिकायत दर्ज करने या शिकायत शुरू करने के लिए है।

ई.

च

जी.

7 (2003) 8 एससीसी 559।

एच.

641

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

क.

अभियोजन और संज्ञान लेने के लिए नहीं।यह निश्चित रूप से न्यायालय को उस अपराध का संज्ञान लेने से रोकता है जिसमें उक्त अध्याय में उल्लिखित अवधि की समाप्ति के बाद न्यायालय के समक्ष शिकायत दायर की जाती है।यह उक्त अध्याय में पाई गई संहिता की धारा 469 से स्पष्ट है जो विशेष रूप से कहता है कि किसी अपराध के संबंध में सीमा की अवधि या तो अपराध की तारीख से या अपराध का पता चलने की तारीख से शुरू होगी।धारा 470 इंगित करती है कि सीमा की अवधि की गणना करते समय, जिस समय के दौरान मामले पर किसी अन्य अदालत में या अपील में या अपराधी के खिलाफ पुनरीक्षण में लगन से मुकदमा चलाया जा रहा था, उसे बाहर रखा जाना चाहिए।उक्त खंड में स्पष्टीकरण में यह भी प्रावधान किया गया है कि सरकार या किसी अन्य प्राधिकरण की सहमति या मंजूरी प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय की गणना में बाहर रखा जाना चाहिए।इसी तरह, जिस अवधि के दौरान अदालत बंद थी, उसे भी बाहर करना होगा।इन सभी प्रावधानों से संकेत मिलता है कि न्यायालय संज्ञान लेते हुए उस अपराध का संज्ञान ले सकता है जिसकी शिकायत निर्धारित सीमा अवधि के भीतर उसके समक्ष दायर की जाती है और यदि आवश्यक हो, तो ऐसे समय को हटाने के बाद जो कानूनी रूप से बहिष्कृत है।यह हमारी राय में स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि निर्धारित सीमा सीमा की अवधि के भीतर संज्ञान लेने के लिए नहीं है, बल्कि उस अपराध का संज्ञान लेने के लिए है जिसके संबंध में संहिता के तहत निर्धारित सीमा की अवधि से परे शिकायत दर्ज की जाती है या अभियोजन शुरू किया जाता है।हमारे इस दृष्टिकोण के वैधानिक संकेत के अलावा, हम इस दृष्टिकोण के लिए इस तथ्य से समर्थन पाते हैं कि संज्ञान लेना अदालत का एक कार्य है जिस पर अभियोजन एजेंसी या शिकायतकर्ता का कोई नियंत्रण नहीं है।इसलिए, संहिता के तहत सीमा की अवधि के भीतर दायर की गई शिकायत को अदालत के किसी अधिनियम द्वारा निष्फल नहीं बनाया जा सकता है। कानूनी वाक्यांश "एक्टस क्यूरी नेमिनेम ग्रेवबिट" जिसका अर्थ है कि अदालत का कोई कार्य किसी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा, या अदालत की ओर से देरी से किसी भी पक्ष को नुकसान नहीं उठाना चाहिए, यह भी इस विचार का समर्थन करता है कि विधायिका किसी अपराध का संज्ञान लेने के अदालत के कार्य पर सीमा की अवधि लगाने का इरादा नहीं रख सकती थी ताकि शिकायतकर्ता के मामले को विफल किया जा सके।हमारा यह दृष्टिकोण रश्मि कुमार बनाम महेश के मामले में इस न्यायालय के पहले के फैसले के अनुरूप भी है।

ग

डी.

ई.

च

जी.

कुमार भादा 8.

8 (1997) 2 एससीसी 397:1997 एससीसी (सीआरआई) 415

एच.

642

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2022] 5 एस सी आर।

11. यदि संहिता के अध्याय XXXVI की इस व्याख्या को मामले के तथ्यों पर लागू किया जाना है, तो हम देखते हैं कि अपराध का पता 5-3-1999 पर चला था और शिकायत 3-3-2000 पर अदालत के समक्ष दायर की गई थी, जो कि सीमा की अवधि के भीतर थी, इसलिए, यह तथ्य कि अदालत ने अपराध का संज्ञान केवल 25-3-2000 पर लिया था, इसके दायर होने के लगभग 25 दिन बाद, शिकायत को सीमा द्वारा वर्जित नहीं करेगा।

12. हमारे उपरोक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए, हम नहीं समझते कि हमारे लिए अपीलार्थियों की ओर से तर्क दिए गए अगले प्रश्न पर जाना आवश्यक है कि नीचे दी गई अदालत ने सीमा की अवधि बढ़ाने के लिए संहिता की धारा 473 को लागू करने में गलती की थी और न ही हमारे लिए हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम तारा दत्त और अन्र के मामले पर चर्चा करना आवश्यक है। 9 अपीलार्थियों द्वारा भरोसा किया गया।"

ग

(जोर दिया गया)

(ग**)** जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहंती **10** में अपराध

यह कथित रूप से 2.2.1996 पर किया गया था और शिकायत 5.2.1996 पर दर्ज की गई थी, लेकिन अपराध का संज्ञान 8.8.1997 पर लिया गया था जब संबंधित अपराध के लिए संहिता की धारा 468 के तहत सीमा की अवधि केवल छह महीने थी।भारत दामोदर काले 7 सहित प्रासंगिक मामलों पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ ने कहाः

डी.

ई.

“48. जहाँ तक शिकायतकर्ता का संबंध है, जैसे ही वह किसी सक्षम अदालत में शिकायत दर्ज करता है, उसने वह सब कुछ किया है जो उस स्तर पर उसके द्वारा किया जाना आवश्यक है।इसके बाद, यह मजिस्ट्रेट पर है कि वह मामले पर विचार करे, अपने दिमाग को लागू करे और संज्ञान लेने, प्रक्रिया जारी करने या किसी अन्य कार्रवाई का उचित निर्णय ले, जिस पर कानून विचार करता है।शिकायतकर्ता का उन कार्यवाहियों पर कोई नियंत्रण नहीं है।

च

49. कई कारणों से (उनमें से कुछ का उल्लेख उपरोक्त निर्णयों में किया गया है, जो केवल उदाहरणात्मक मामले हैं और संपूर्ण प्रकृति के नहीं हैं), अदालत या मजिस्ट्रेट के लिए प्रक्रिया जारी करना या संज्ञान लेना संभव नहीं हो सकता है।लेकिन एक शिकायतकर्ता को अदालत की ओर से इस तरह की देरी के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है और न ही वह विफलता या चूक के कारण गैर-उपयुक्त हो सकता है

जी.

9 (2000) 1 एससीसी 230:2000 एससीसी (सीआरआई) 125 10 (2007) 7 एससीसी 394।

एच.

643

क.

संहिता के तहत उचित कार्रवाई करने में मजिस्ट्रेट।जब कोई शिकायतकर्ता कानून द्वारा निर्धारित समय के भीतर अदालत में जाता है तो किसी भी आपराधिक कार्यवाही को अचानक समाप्त नहीं किया जा सकता है।ऐसे मामलों में, सिद्धांत 'एक्टस क्यूरी नेमिनेम ग्रेवबिट' (अदालत का एक कार्य किसी पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा) वास्तव में लागू होगा।(सिकंदर के माध्यम से

रॉजर बनाम कॉम्प्टायर डी 'एस्कॉम्प्टे।11 पहला और सबसे ऊँचा

सभी न्यायालयों का कर्तव्य यह ध्यान रखना है कि न्यायालय का कोई कार्य दावेदारों को कोई नुकसान न पहुँचाए।

50. संहिता पीड़ित पक्ष पर कानून द्वारा प्रदान की गई अवधि के भीतर उपयुक्त मंच का सहारा लेने का दायित्व लगाती है और एक बार जब वह ऐसी कार्रवाई करता है, तो यह पूरी तरह से अनुचित और असमान होगा यदि उसे बताया जाए कि उसकी शिकायत को उजागर नहीं किया जाएगा क्योंकि अदालत ने सीमा की अवधि के भीतर कोई कार्रवाई नहीं की थी।न्याय को बढ़ावा देने के बजाय कानून की इस तरह की व्याख्या से अन्याय को बढ़ावा मिलेगा और प्रक्रियात्मक कानून के प्राथमिक उद्देश्य को पराजित किया जा सकेगा।

ग

डी.

51. इस मामले को अलग-अलग कोण से भी देखा जा सकता है।एक बार जब यह स्वीकार कर लिया जाता है (और इसके बारे में कोई विवाद नहीं होता है) कि किसी अपराध का संज्ञान लेना या प्रक्रिया जारी करना शिकायतकर्ता या अभियोजन एजेंसी के अधिकार क्षेत्र में नहीं है और केवल एक चीज जो शिकायतकर्ता कर सकता है वह है शिकायत दर्ज करना या कानून के अनुसार कार्यवाही शुरू करना, यदि कार्यवाही शुरू करने की कार्रवाई सीमा की अवधि के भीतर की गई है, तो शिकायतकर्ता प्रक्रिया जारी करने या अपराध का संज्ञान लेने में अदालत या मजिस्ट्रेट की ओर से किसी भी देरी के लिए जिम्मेदार नहीं है।अब, यदि उसे अदालत या मजिस्ट्रेट की ओर से चूक, चूक या निष्क्रियता के कारण दंडित करने की मांग की जाती है, तो कानून के प्रावधान को संविधान के अनुच्छेद 14 की कसौटी पर परखना पड़ सकता है।संभवतः यह आग्रह किया जा सकता है कि ऐसा प्रावधान पूरी तरह से मनमाना, तर्कहीन और अनुचित है।यह तय कानून है कि एक अदालत एक ऐसे प्रावधान की व्याख्या करेगी जो कानूनी नियमों को अपनाकर इसे कमजोर और असंवैधानिक बनाने के बजाय उचित निर्माण के सिद्धांत को लागू करके कानून की वैधता को बनाए रखने में मदद करेगी।संहिता की धारा 468 में सीमा के प्रावधान को प्रक्रिया जारी करने या अदालत द्वारा संज्ञान लेने से जोड़ना इसे अस्थिर और संविधान के अनुच्छेद 14 के अधिकार से बाहर कर सकता है।

ई.

च

जी.

11 (1871) एलआर 3 पीसी 465:17 ईआर 120

एच.

52. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम मानते हैं कि सीमा की अवधि की गणना करने के उद्देश्य से, प्रासंगिक तिथि को शिकायत दर्ज करने या आपराधिक कार्यवाही शुरू करने की तारीख माना जाना चाहिए, न कि मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लेने या

अदालत द्वारा प्रक्रिया जारी करने की तारीख।इसलिए, हम उन सभी निर्णयों को खारिज करते हैं जिनमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि सीमा की अवधि की गणना करने के लिए महत्वपूर्ण तिथि मजिस्ट्रेट/अदालत द्वारा संज्ञान लेना है न कि शिकायत दर्ज करने या आपराधिक कार्यवाही शुरू करने की।53. तत्काल मामले में, कथित अपराध की तारीख से तीन दिनों की अवधि के भीतर शिकायत दर्ज की गई थी।इसलिए, शिकायत को सीमित अवधि के भीतर दायर किया जाना चाहिए, भले ही विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा एक वर्ष की अवधि के बाद संज्ञान लिया गया हो।चूँकि उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक कार्यवाही को रद्द कर दिया गया है, इसलिए आदेश को दरकिनार कर दिया जाना चाहिए और तदनुसार मजिस्ट्रेट को मामले को आगे बढ़ाने और कानून के अनुसार जल्द से जल्द एक उचित आदेश पारित करने का निर्देश देकर दरकिनार कर दिया जाता है।"

ग

डी.

(जोर दिया गया)

(डी) सारा मैथ्यू बनाम हृदय संवहनी रोग संस्थान

आदि और अन्य **12,** इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की एक पीठ ने मामले के तथ्यों को निम्नानुसार नोट किया:**- -** प**.**व**.**१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है **-**

ई.

“1. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री के. स्वामी ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय [इंस्टीट्यूट ऑफ कार्डियो वैस्कुलर डिजीज बनाम सारा मैथ्यू, 1997 का आपराधिक ओपी संख्या 12001, ने यह निर्णय देते हुए स्पष्ट रूप से गलत था कि प्रतिवादियों के खिलाफ कार्यवाही को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 468 (2) (सी) के तहत प्रदान की गई सीमा से रोक दिया गया था, क्योंकि अभियुक्त के खिलाफ समन जारी करने का आदेश मजिस्ट्रेट द्वारा घटना की तारीख से तीन साल बाद पारित किया गया था, भले ही शिकायत को सीमा की अवधि के भीतर दायर किया गया था।तर्क के समर्थन में, वह भारत दामोदर काले 7 में इस न्यायालय के दो-न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर भरोसा करता है, जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XXXVI में निहित प्रावधानों की जांच पर, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान ले सकता है, जिसकी शिकायत उसके समक्ष दायर की जाती है, सीमा की अवधि के भीतर।

च

जी.

12 (2014) 2 एससीसी 102 ए

एच.

645

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

विहित और, यदि आवश्यक हो, ऐसे समय को हटाने के बाद जो कानूनी रूप से बहिष्कृत है।इसने आगे कहा कि निर्धारित सीमा सीमा की अवधि के भीतर संज्ञान लेने के लिए नहीं है, बल्कि उस अपराध का संज्ञान लेने के लिए है जिसके संबंध में शिकायत दर्ज की जाती है या दंड प्रक्रिया संहिता के तहत निर्धारित सीमा की अवधि से परे अभियोजन शुरू किया जाता है।भारत दामोदर काले 7 के फैसले का पालन दो अन्य न्यायाधीशों की पीठ करती है।

जापानी साहू बनाम चंद्र शेखर मामले में इस न्यायालय का निर्णय

मोहंती 10.जापानी साहू 10 में निर्णय के पैरा 52 में, यह दोहराया गया कि सीमा की अवधि की गणना करने के उद्देश्य से, प्रासंगिक तिथि को शिकायत दर्ज करने या आपराधिक कार्यवाही शुरू करने की तारीख माना जाना चाहिए, न कि मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लेने या अदालत द्वारा प्रक्रिया जारी करने की तारीख।"

ग

इसके बाद, कृष्ण पिल्लई 5 के विपरीत भारत दामोदर काले 7 और जापानी साहू 10 में लिए गए दृष्टिकोण में संघर्ष को ध्यान में रखते हुए, मामले को तीन न्यायाधीशों की पीठ को भेजा गया, जिसने मामले को एक बड़ी पीठ को भेज दिया।ऐसा करते हुए, तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने कहाः

डी.

"……कृष्ण पिल्लई 5 में तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने विभिन्न पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया है, जिसमें ये पहलू भी शामिल हैं कि अदालत की ओर से तेजी से या सीमा के भीतर संज्ञान नहीं लेते हुए निष्क्रियता, हालांकि शिकायत समय के भीतर दायर की गई है या अभियोजन समय के भीतर शुरू किया गया है, अभियोजन या शिकायतकर्ता के लिए प्रतिकूल कार्य नहीं करना चाहिए।"

ई.

(ई) सारा मैथ्यू बनाम मामले में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ।

हृदय संवहनी रोग संस्थान आदि और अन्य 3 ने

च

इस पर विचार करने के लिए प्रश्न निम्नानुसार हैंः"3. हमें कोई विशिष्ट प्रश्न नहीं भेजे गए हैं।लेकिन, हमारी राय में, निम्नलिखित प्रश्न हमारे विचार के लिए उत्पन्न होते हैंः3.1.(i) क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के तहत सीमा की अवधि की गणना करने के उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक तिथि शिकायत दर्ज करने की तारीख है या अभियोजन की स्थापना की तारीख है या क्या प्रासंगिक तिथि वह तारीख है जिस पर एक मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान लेता है?

जी.

13 (2014) 2 एससीसी 104।

एच.

3.2.(ii) दो मामलों में से कौन सा मामला अर्थात कृष्ण पिल्लई 5 या भारत काले 7 (जिसका अनुसरण जापानी साहू 10 में किया गया है) सही कानून निर्धारित करता है?"

42 वें विधि आयोग की रिपोर्ट और संहिता के अध्याय XXXVI के प्रासंगिक प्रावधानों और योजना पर ध्यान देने के बाद, संविधान पीठ ने कहाः

"37. हम इस दृष्टिकोण को अपनाने के लिए भी इच्छुक हैं क्योंकि आपराधिक अपराधों से संबंधित सीमा के मामलों में कुछ निश्चितता या निश्चितता होनी चाहिए।यदि, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा कहा गया है, संज्ञान लेना मजिस्ट्रेट द्वारा संदिग्ध अपराध के लिए दिमाग का उपयोग है, तो व्यक्तिपरक तत्व आता है।मजिस्ट्रेट ने संज्ञान लिया है या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।एक मेहनती शिकायतकर्ता या अभियोजन एजेंसी जो तुरंत शिकायत दर्ज करती है या

अभियोजन शुरू करती है, गंभीर रूप से पूर्वाग्रहग्रस्त होगी यदि यह माना जाता है कि गणना सीमा के लिए प्रासंगिक बिंदु वह तारीख होगी जिस पर मजिस्ट्रेट संज्ञान लेगा।शिकायतकर्ता या अभियोजन एजेंसी को पूरी तरह से मजिस्ट्रेट की दया पर छोड़ दिया जाएगा, जो कई कारणों से सीमा अवधि के बाद संज्ञान ले सकता है; प्रणालीगत या अन्यथा।विधायिका का इरादा किसी मेहनती शिकायतकर्ता को इस तरह से अदालत से बाहर करने का नहीं हो सकता है।इसके अलावा, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि शिकायतकर्ता अपनी शिकायत के निवारण के लिए अदालत का रुख करता है।वह चाहते हैं कि अपराध करने वालों के खिलाफ कार्रवाई की जाए।आपराधिक न्याय प्रणाली के तहत काम करने वाली अदालतें इस उद्देश्य के लिए बनाई गई हैं।यह विचार रखना अनुचित होगा कि किसी मामले का संज्ञान लेने में अदालत द्वारा की गई देरी एक मेहनती शिकायतकर्ता को न्याय से वंचित कर देगी।सी. आर. पी. सी. की धारा 468 की ऐसी व्याख्या अस्थिर होगी और इसे असंवैधानिक बना देगी।यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि एक अदालत एक ऐसे प्रावधान की व्याख्या करेगी जो एक ऐसे सिद्धांत को लागू करने के बजाय उचित निर्माण के सिद्धांत को लागू करके कानून की वैधता को बनाए रखने में मदद करेगा जो प्रावधान को अस्थिर और संविधान के अधिकार से बाहर कर देगा।(यू. पी. पावर कार्पोरेशन

ग

डी.

ई.

च

जी.

लिमिटेड वी.अयोध्या प्रसाद मिश्रा 14)

***

** *

** *

14 (2008) 10 एससीसी 139:(2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 1000 ए

एच.

647

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

41. वकील द्वारा उद्धृत व्याख्या के नियमों के बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता है।यह सच है कि संबंधित प्रावधानों में कोई अस्पष्टता नहीं है।लेकिन, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि "संज्ञान" शब्द को सीआरपीसी में परिभाषित नहीं किया गया है। इसलिए इस न्यायालय को इस शब्द की व्याख्या करनी पड़ी।हम उस व्याख्या को स्वीकार कर चुके हैं।वास्तव में, हम उस व्याख्या के आधार पर और "संज्ञान" शब्द द्वारा अर्जित उस विशेष अर्थ को ध्यान में रखते हुए इस संदर्भ का उत्तर देने के लिए आगे बढ़े हैं।एक बार जब उस व्याख्या को स्वीकार कर लिया जाता है, तो शीर्षक के साथ अध्याय XXXVI को उसी प्रकाश में समझना होगा।ऐसी स्थिति में उद्देश्यपूर्ण निर्माण का नियम लागू किया जा सकता है।एक अधिनियम का एक उद्देश्यपूर्ण निर्माण वह है जो उस अधिनियम के शाब्दिक अर्थ का पालन करके विधायी उद्देश्य को प्रभावी बनाता है जहां वह अर्थ विधायी उद्देश्य के अनुसार है या एक तनावपूर्ण अर्थ लागू करके जहां शाब्दिक अर्थ विधायी उद्देश्य के अनुसार नहीं है।

ग

उद्देश्य (वैधानिक व्याख्या पर फ्रांसिस बेनिओन देखें)।

फ्रांसिस द्वारा दी गई इस परिभाषा पर ध्यान देने के बाद

डी.

राष्ट्रीय बीमा कंपनी लिमिटेड में बेनिओन बनामलक्ष्मी नारायण

15, इस न्यायालय ने नोट किया किः(एस. सी. सी. पी. 718, पैरा 35) "35. अक्सर, किसी क़ानून की शाब्दिक व्याख्या या क़ानून के प्रावधान के परिणामस्वरूप बेतुकेपन होता है।इसलिए, वैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करते समय, अदालतों को उन उद्देश्यों या उद्देश्यों को ध्यान में रखना चाहिए जिनके लिए क़ानून बनाया गया है।" इस अवलोकन के आलोक में, हमारी राय है कि यदि तत्काल मामले में शाब्दिक व्याख्या किसी भी तरह से विधायी इरादे के साथ टकराव में प्रतीत होती है या बेतुकी की ओर ले जा रही है, तो उद्देश्यपूर्ण व्याख्या को अपनाना होगा।

ई.

च

***

** *

** *

49. यह सच है कि दंडात्मक कानूनों का सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए।हालाँकि, ऐसे मामले हैं जहाँ इस न्यायालय ने शामिल अपराधों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, दंडात्मक कानूनों के किसी भी संकीर्ण और पांडित्यपूर्ण, शाब्दिक और शाब्दिक निर्माण को अपनाने से इनकार कर दिया है।

जी.

(मुरलीधर मेघराज लोया बनाम महाराष्ट्र राज्य 16 और किसान त्र्यंबक कोठुला बनाम महाराष्ट्र राज्य देखें।17 इसमें

15 (2007) 3 एससीसी 700:(2007) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 142 16 (1976) 3 एस. सी. सी. 684:1976 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 493 17 (1977) 1 एस. सी. सी. 300:1977 एससीसी (सीआरआई) 97

एच.

मामले में, विधायी इरादे को देखते हुए, हमने अध्याय XXXVI के प्रावधानों का सामंजस्यपूर्ण अर्थ निकाला है ताकि शिकायतकर्ता के अधिकार और अभियुक्त के अधिकार के बीच संतुलन बनाया जा सके।इसके अलावा, हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि अध्याय XXXVI दंड प्रक्रिया संहिता का हिस्सा है, जो एक प्रक्रियात्मक कानून है और यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि प्रक्रियात्मक कानूनों को न्याय की सहायक के रूप में काम करने के लिए उदारता से समझा जाना चाहिए न कि इसकी मालकिन के रूप में।(सरदार अमरजीत सिंह कालरा (डी) एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. बनाम देखें।एल. आर. एस. और अन्य द्वारा प्रमोद गुप्ता (डी)। 18, एन. बालाजी बनाम विरेंद्र सिंह 19 और कैलाश बनाम नानखु और अन्य। 20 "

अंत में, पैराग्राफ 50 और 51 में यह निष्कर्ष निकाला गयाः“50. विधायी इरादे, इस न्यायालय की आधिकारिक घोषणाओं और स्थापित कानूनी सिद्धांतों के आलोक में इस संदर्भ में उत्पन्न होने वाले प्रश्नों पर विचार करने के बाद, हमारी राय है कि कृष्ण पिल्लई 5 को अपने स्वयं के तथ्यों तक ही सीमित रखना होगा और यह सवाल तय करने का अधिकार नहीं है कि धारा 468 सी. आर. पी. सी. के तहत सीमा की अवधि की गणना करने के उद्देश्य से प्रासंगिक तिथि क्या है, मुख्य रूप से क्योंकि उस मामले में, यह न्यायालय बाल विवाह प्रतिबंध अधिनियम, 1929 की धारा 9 के साथ काम कर रहा था जो एक विशेष

अधिनियम है। इसमें विशेष रूप से कहा गया है कि कोई भी अदालत उक्त अधिनियम के तहत किसी भी अपराध का संज्ञान उस तारीख से एक साल की समाप्ति के बाद नहीं लेगी जिस दिन अपराध करने का आरोप लगाया गया है।उस फैसले में धारा 468 या धारा 473 का कोई संदर्भ नहीं है।यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4 और 5 का उल्लेख नहीं करता है जो विशेष अधिनियमों के लिए अपवाद बनाते हैं।इस न्यायालय ने विभिन्न पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया है, जिसमें यह पहलू भी शामिल है कि अदालत की ओर से सीमा के भीतर संज्ञान लेने में निष्क्रियता, हालांकि शिकायत समय के भीतर दायर की जाती है, शिकायतकर्ता पर बहुत अन्याय कर सकती है।इसके अलावा, अंतुले '1984' मामले 6 पर दी गई निर्भरता, हमारी राय में, उपयुक्त नहीं थी।अंतुले '1984' मामले 6 में यह न्यायालय अन्य बातों के साथ इस तर्क पर विचार कर रहा था कि आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 1952 ("1952 अधिनियम") की धारा 6 के तहत स्थापित विशेष न्यायाधीश के न्यायालय में एक निजी शिकायत बनाए रखने योग्य नहीं है।यह आग्रह किया गया कि 1952 के अधिनियम में अंतर्निहित उद्देश्य अधिक प्रावधान करना था।

ग

डी.

ई.

च

जी.

18 (2003) 3 एससीसी 272 19 (2004) 8 एससीसी 312 20 (2005) 4 एससीसी 480] ए

एच.

649

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

लोक सेवक द्वारा भ्रष्टाचार के अपराधों की त्वरित सुनवाई।यह तर्क दिया गया कि यदि यह माना जाता है कि एक निजी शिकायत बनाए रखने योग्य है तो संज्ञान लेने से पहले, एक विशेष न्यायाधीश को शिकायतकर्ता और सभी गवाहों से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के अनुसार पूछताछ करनी होगी। उसे अभियुक्त के खिलाफ प्रक्रिया जारी करने को स्थगित करना होगा और या तो स्वयं मामले की जांच करनी होगी या किसी पुलिस अधिकारी द्वारा और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 के तहत मामलों में निर्दिष्ट रैंक के पुलिस अधिकारियों द्वारा जांच करने का निर्देश देना होगा ताकि यह तय किया जा सके कि कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं।यह प्रस्तुत किया गया था कि यह 1952 के अधिनियम के उद्देश्य को विफल कर देगा जो त्वरित मुकदमे का प्रावधान करता है।इस तर्क को इस न्यायालय द्वारा यह मानते हुए खारिज कर दिया गया था कि यह प्रक्रिया के मुद्दे की पूर्व शर्त नहीं है कि आवश्यक अदालत को धारा 202 सी. आर. पी. सी. द्वारा परिकल्पित जांच या प्रत्यक्ष जांच करनी चाहिए जैसा कि उसमें विचार किया गया है।यह अदालत के विवेक का मामला है।इस प्रकार, इस संदर्भ में जो प्रश्न उठते हैं, वे अंतुले '1984' मामले 6 में शामिल नहीं थे:चूंकि यह न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 में प्रतिबिंबित सीमा प्रतिबंध के प्रश्न पर विचार नहीं कर रहा था, हमारी राय में, उक्त निर्णय को कृष्ण पिल्लई 5 में दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XXXVI के प्रावधानों का अर्थ लगाते हुए उपयोगी रूप से संदर्भित नहीं किया जा सकता था। इन सभी कारणों से हम इस दृष्टिकोण का समर्थन करने में असमर्थ हैं

ग

डी.

कृष्ण पिल्लई 5 में।

ई.

51. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम मानते हैं कि धारा 468 सी. आर. पी. सी. के तहत सीमा की अवधि की गणना करने के उद्देश्य से प्रासंगिक तिथि शिकायत दर्ज करने की तारीख या अभियोजन की स्थापना की तारीख है न कि उस तारीख को जिस पर मजिस्ट्रेट संज्ञान लेता है।हम आगे मानते हैं कि भारत काले 7, जिसका अनुसरण जापानी साहू 10 में किया गया है, सही नियम निर्धारित करता है।कृष्ण पिल्लई 5 को अपने स्वयं के तथ्यों तक ही सीमित रखना होगा और यह सवाल तय करने का अधिकार नहीं है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के तहत सीमा की अवधि की गणना करने के उद्देश्य से प्रासंगिक तिथि क्या है।13. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि यद्यपि संहिता की धारा 468 में आदेश दिया गया है कि अपराध करने से निर्दिष्ट अवधि के भीतर 'संज्ञान' लिया जाना चाहिए, उद्देश्यपूर्ण निर्माण के सिद्धांतों का आह्वान करके, इस न्यायालय ने फैसला सुनाया कि एक शिकायतकर्ता को पूर्वाग्रह में नहीं डाला जाना चाहिए, यदि अभियोजन एजेंसी या शिकायतकर्ता के नियंत्रण से परे कारणों के लिए, संज्ञान सीमा की अवधि के बाद लिया गया था।संविधान पीठ ने यह मत व्यक्त किया कि यदि शिकायत दायर की जाती है

च

जी.

एच.

या कार्यवाही की शुरुआत किसी अपराध के होने की तारीख से निर्धारित अवधि के भीतर थी, न्यायालय निर्धारित अवधि समाप्त होने के बाद भी संज्ञान लेने का हकदार होगा।

14. सारा मैथ्यू 3 के कथन को उन स्थितियों के आलोक में समझना होगा जिन पर संविधान पीठ ने विचार किया था।यदि अपराध करने से संहिता की धारा 468 के तहत निर्धारित अवधि के भीतर कोई शिकायत दर्ज की गई थी, लेकिन ऐसी अवधि की समाप्ति के बाद संज्ञान लिया गया था, तो धारा 468 के प्रयोजनों के लिए निर्धारित अवधि के लिए अंतिम बिंदु को संज्ञान लेने की तारीख से शिकायत दर्ज करने या कार्यवाही शुरू करने के लिए स्थानांतरित कर दिया गया था ताकि शिकायतकर्ता या अभियोजन पक्ष के नियंत्रण से परे कारणों के लिए शिकायत को खारिज नहीं किया जाना चाहिए।

ग

15. आइए अब हम अधिनियम के तहत मामलों में इन सिद्धांतों की प्रयोज्यता पर विचार करें। अधिनियम के प्रावधानों में संबंधित मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही शुरू करने के लिए धारा 12 के तहत आवेदन दायर करने पर विचार किया गया है।दोनों पक्षों को सुनने के बाद और अभिलेख पर सामग्री को ध्यान में रखने के बाद, मजिस्ट्रेट अधिनियम की धारा 12 के तहत एक उचित आदेश पारित कर सकता है। यह केवल ऐसे आदेश का उल्लंघन है जो एक अपराध है जैसा कि अधिनियम की धारा 31 से स्पष्ट है। इस प्रकार, यदि अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में कोई अपराध किया जाता है, तो संहिता की धारा 468 के तहत निर्धारित सीमा इस तरह के अपराध के होने की तारीख से लागू होगी।जब तक अधिनियम की धारा 12 के तहत एक आवेदन को प्राथमिकता दी जाती है, तब तक अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में कोई अपराध नहीं किया जाता है और इस तरह अधिनियम की धारा 12 के तहत आवेदन की तारीख से सीमा के लिए कोई प्रारंभिक बिंदु नहीं होगा। सीमा के लिए ऐसा प्रारंभिक बिंदु अधिनियम की धारा 12 के तहत पारित आदेश के उल्लंघन के बाद ही उत्पन्न होगा। 16.अब हम उस मामले पर विचार कर सकते हैं जिस पर उच्च न्यायालय ने भरोसा किया था।

डी.

ई.

च

मामला जहां पक्षों के बीच विवाह निर्णय और डिक्री दिनांक 20.03.2008 द्वारा भंग कर दिया गया था।इसके बाद, पत्नी ने 4.5.2009 पर अधिनियम के प्रावधानों के तहत एक आवेदन को प्राथमिकता दी जिसमें आरोप लगाया गया था कि तलाक की डिक्री नकली थी और तलाक के बाद भी पक्षकार पति-पत्नी के रूप में एक साथ रह रहे थे और इसके बाद उन्हें वैवाहिक घर छोड़ने के लिए मजबूर किया गया था।इन परिस्थितियों में यह था कि

जी.

21 (2011) 12 एससीसी 588 ए

एच.

651

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

संहिता की धारा 482 के तहत पति द्वारा अधिनियम के तहत कार्यवाही को रद्द करने के लिए आवेदन दायर किया गया था। यह देखा गया कि पत्नी द्वारा तलाक के फैसले और डिक्री को अमान्य घोषित करने के लिए दायर किया गया मुकदमा अभी भी सक्षम अदालत के समक्ष विचाराधीन है।तलाक के लिए डिक्री में समाप्त होने वाली कार्यवाही के प्रभाव पर इस न्यायालय द्वारा निम्नानुसार विचार किया गया थाः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

“16. सवाल यह उठता है कि क्या शिकायत में मांगी गई राहत आपराधिक अदालत द्वारा तब तक दी जा सकती है जब तक कि दीवानी अदालत का दिनांकित 20-3-2008 का फैसला और डिक्री बनी रहती है।उत्तरदाता 2 ने निम्नानुसार प्रार्थना की हैः

“इसलिए यह प्रार्थना की जाती है कि प्रतिवादी 1 को नाबालिग बच्चे गुरजीत सिंह ग्रेवाल की अभिरक्षा तुरंत सौंपने का निर्देश दिया जाए।यह भी प्रार्थना की जाती है कि प्रतिवादी 1 को निर्देश दिया जाए कि वह उसे लुधियाना में उसके निवास के लिए किराए पर लिए जाने वाले परिसर के किराए के रूप में 15,000 रुपये प्रति माह की राशि का भुगतान करे।यह भी प्रार्थना की जाती है कि सभी उत्तरदाताओं को निर्देश दिया जाए कि वे उसे अनुलग्नक ए से सी में विस्तृत सभी दहेज वस्तुओं को बहाल करें या वैकल्पिक रूप से उन्हें दहेज वस्तुओं की कीमत के रूप में Rs.22,95,000 की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया जाए।शपथ पत्र संलग्न है।"

ग

डी.

इस प्रकार, मांगी गई राहत तीन गुना रही हैः(क) नाबालिग बेटे की अभिरक्षा; (ख) निवास का अधिकार; और (ग) दहेज की वस्तुओं की बहाली।

ई.

17. यह एक तय कानूनी प्रस्ताव है कि जहां किसी व्यक्ति को गलत तरीके से प्रस्तुत करके या सक्षम प्राधिकारी के साथ धोखाधड़ी करके आदेश/कार्यालय मिलता है, तो इस तरह के आदेश को कानून की नजर में कायम नहीं रखा जा सकता है क्योंकि धोखाधड़ी से सब कुछ उजागर हो जाता है।“समानता हमेशा कानून को चालाक चोरी और कानून से बचने के लिए आविष्कार की गई नई सूक्ष्मताओं से बचाने के लिए जानी जाती है।” यह सामान्य बात है कि "धोखाधड़ी और न्याय कभी नहीं होता।

च

एक साथ रहें "।धोखाधड़ी एक है

कुछ सुरक्षित करने के लिए एक डिजाइन के साथ जानबूझकर धोखे का कार्य, जो अन्यथा देय नहीं है।धोखाधड़ी और छल एक दूसरे के पर्याय हैं।“धोखाधड़ी सभी न्यायसंगत सिद्धांतों के लिए अभिशाप है और धोखाधड़ी से दूषित किसी भी मामले को किसी भी न्यायसंगत सिद्धांत के अनुप्रयोग से कायम या बचाया नहीं जा सकता है।” अदालत में धोखाधड़ी के कार्य को हमेशा देखा जाता है।

जी.

गंभीरता से।(मेघमाला बनाम जी. नरसिम्हा रेड्डी 22)

22 (2010) 8 एस. सी. सी. 383

एच.

652

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2022] 5 एस सी आर।

18. हालांकि, सवाल यह उठता है कि क्या किसी पक्ष के लिए निर्णय और आदेश को सक्षम अदालत से अलग किए बिना अमान्य मानने की अनुमति है।यह मुद्दा अब एकीकृत नहीं है और इस न्यायालय के कई फैसलों द्वारा सुलझा लिया गया है।इस तरह के आदेश को रद्द करने के लिए, भले ही अमान्य हो, पक्ष को उपयुक्त मंच से संपर्क करना होगा।[केरल राज्य बनाम.

एम. के. कुन्हीकन्नन नाम्बियार मंजेरी मणिकोथ 23 और तैयबभाई एम. बागसरवाला बनाम हिंद रबर इंडस्ट्रीज (पी) लिमिटेड। 24] "

परिसीमन के मुद्दे पर आधारित याचिका पर तब पैराग्राफ 32 और 33 में विचार किया गया और यह देखा गयाः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

ग

“32. सी. आर. पी. सी. की धारा 468 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए सीमा के मुद्दे पर श्री रंजीत कुमार द्वारा की गई दलीलें कि शिकायत घटना की तारीख से केवल एक वर्ष की अवधि के भीतर दायर की जा सकती है, घरेलू हिंसा से महिलाओं के संरक्षण नियम, 2006 के नियम 15 (6) के साथ पठित 2005 के अधिनियम की धारा 28 और 32 के प्रावधानों को देखते हुए बेतुकी लगती हैं, जो सी. आर. पी. सी. के प्रावधानों को लागू करते हैं और जापानी साहू बनाम चंद्र मामले में इस अदालत के फैसलों द्वारा मजबूत होते हैं।

डी.

शेखर मोहंती 10 और नोएडा उद्यमी संघ बनाम नोएडा 25।

33. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हमारी यह सुविचारित राय है कि 2005 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत मजिस्ट्रेट को शिकायत के साथ आगे बढ़ने की अनुमति देना संगत नहीं है और तलाक की डिक्री के अनुरूप है जो अभी भी मौजूद है और इस प्रकार, प्रक्रिया अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।निस्संदेह, किसी शिकायत को रद्द करने के लिए, अदालत को अपनी सामग्री को उसके अंकित मूल्य पर लेना पड़ता है और यदि वह किसी अपराध का खुलासा करता है, तो अदालत आम तौर पर उसमें हस्तक्षेप नहीं करती है।हालाँकि, इस मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स की पृष्ठभूमि में, अदालत को शिकायत के साथ आगे बढ़ने की अनुमति देना न्याय का उपहास होगा।इस प्रकार, न्याय का हित उसी को रद्द करने का आदेश देता है।"17. एक अन्य मामला जिस पर सुनवाई के दौरान निर्भरता रखी गई थी

ई.

च

कृष्ण भट्टाचार्जी बनाम सारथी चौधरी **26.**उस मामले में**,** ए

जी.

न्यायिक पृथक्करण के लिए आदेश एक सक्षम अदालत द्वारा पारित किया गया था।

23 (1996) 1 एससीसी 435 24 (1997) 3 एससीसी 443 25 (2011) 6 एससीसी 508 26 (2016) 2 एससीसी 705 ए

एच.

653

कामाची बनाम लक्ष्मी नारायण [उदय उमेश ललित, जे.] ए.

इसके बाद, पत्नी द्वारा अधिनियम की धारा 12 के तहत एक आवेदन को प्राथमिकता दी गई जिसमें स्त्रीधन वस्तुओं और संबद्ध राहतों को वापस करने की मांग की गई थी।पति द्वारा एक याचिका दायर की गई थी कि अधिनियम के तहत कार्यवाही समय से बाधित थी।मजिस्ट्रेट ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायिक अलगाव के लिए डिक्री के परिणामस्वरूप, पक्षों का घरेलू संबंध समाप्त हो गया और इस तरह, कोई राहत नहीं दी जा सकती है।उससे उत्पन्न अपील को निचली अपीलीय अदालत ने खारिज कर दिया था और अंत में पत्नी द्वारा किए गए संशोधन को भी उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया था।इन तथ्यों के आलोक में, इस न्यायालय द्वारा सीमा के मुद्दे पर निम्नानुसार विचार किया गया थाः- -प.व.१४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

“32. कानून के उपरोक्त कथन के संबंध में, हमें यह देखना होगा कि पति या परिवार के किसी अन्य सदस्य द्वारा स्त्रीधन को बनाए रखना एक निरंतर अपराध है या नहीं।इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि पत्नी स्त्रीधन की वसूली के लिए मुकदमा दायर कर सकती है, लेकिन यह उसे आपराधिक विश्वासघात के लिए आपराधिक शिकायत दर्ज करने से नहीं रोकता है।हमें यह बताना होगा कि 2005 के अधिनियम के लागू होने से पहले की स्थिति यही थी।2005 के अधिनियम में, "पीड़ित व्यक्ति" की परिभाषा स्पष्ट रूप से किसी भी महिला की स्थिति के बारे में बताती है जिसे उक्त अधिनियम की धारा 3 के तहत परिभाषित घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ा है। "आर्थिक दुरुपयोग" जैसा कि उक्त अधिनियम की धारा 3 (iv) में परिभाषित किया गया है, का एक बड़ा प्रचार है।धारा 12, जिसका प्रासंगिक भाग यहाँ पहले पुनः प्रस्तुत किया गया है, राहत के आदेश प्राप्त करने के लिए प्रक्रिया प्रदान करती है।इंदरजीत सिंह ग्रेवाल 21 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 468 घरेलू हिंसा से महिलाओं के संरक्षण नियम, 2006 के नियम 15 (6) के साथ पठित उक्त अधिनियम की धारा 28 और 32 के तहत परिकल्पित 2005 अधिनियम के तहत उक्त मामले पर लागू होती है।हमें इसका विज्ञापन करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हमारी यह सुविचारित राय है कि जब तक पीड़ित व्यक्ति की स्थिति बनी रहती है और स्त्रीधन पति की अभिरक्षा में रहता है, तब तक पत्नी हमेशा 2005 के अधिनियम की धारा 12 के तहत अपना दावा कर सकती है। हम इस तरह से सोचने के लिए तैयार हैं क्योंकि विवाह के विघटन की डिक्री के कारण पक्षों के बीच की स्थिति अलग नहीं होती है।"निरंतर अपराध" की अवधारणा स्त्रीधन से वंचित होने की तारीख से आकर्षित होती है, क्योंकि न तो पति और न ही परिवार के किसी अन्य सदस्य का स्त्रीधन पर कोई अधिकार हो सकता है और वे संरक्षक बने रहते हैं।2005 के अधिनियम के उद्देश्य के लिए, वह 2005 के अधिनियम के तहत एक या अधिक राहतों के लिए संरक्षण अधिकारी को आवेदन जमा कर सकती है।

ग

डी.

ई.

च

जी.

एच.

33. वर्तमान मामले में, पत्नी ने 22-5-2010 पर आवेदन प्रस्तुत किया था और उक्त प्राधिकारी ने इसे 1-6-2010 को अग्रेषित किया था।आवेदन में पत्नी ने उल्लेख किया था कि पति ने जनवरी 2010 से मासिक भरण-पोषण का भुगतान बंद कर दिया था और इसलिए, वह स्त्रीधन के लिए आवेदन दायर करने के लिए मजबूर थी।"निरंतर अपराध" की उक्त अवधारणा और की गई मांगों के संबंध में, हम यह सोचने के लिए तैयार हैं कि आवेदन सीमितता से वर्जित नहीं था और निचली अदालतों के साथ-साथ उच्च न्यायालय भी सीमितता द्वारा वर्जित आवेदन को खारिज करके एक गंभीर त्रुटि में पड़ गए थे।"

18. इंद्रजीत सिंह ग्रेवाल 21 का फैसला सारा मैथ्यू 3 में इस अदालत के फैसले से पहले किया गया था।सीमा के मुद्दे के बजाय, इंद्रजीत सिंह ग्रेवाल 21 में इस अदालत के साथ वास्तव में जिस बात का वजन था, वह यह था कि घरेलू हिंसा का आरोप तलाक के आदेश के बाद लगाया गया था, जब पक्षों के बीच कोई भी संबंध अस्तित्व में नहीं था।यह सच है कि संहिता की धारा 468 पर आधारित याचिका को उक्त निर्णय के पैराग्राफ 32 में नोट किया गया था, लेकिन अधिनियम की धारा 12 और 31 के प्रभाव और परस्पर क्रिया पर ध्यान नहीं दिया गया था।कृष्ण भट्टाचार्य 26 में, जैसा कि उक्त निर्णय के पैराग्राफ 33 से स्पष्ट है, सीमा की याचिका को खारिज कर दिया गया था क्योंकि अपराध एक निरंतर अपराध पाया गया था और इस तरह कोई अंतिम बिंदु नहीं था कि किस तारीख से सीमा की गणना की जा सकती थी।

ग

डी.

ई.

इस प्रकार, इनमें से कोई भी निर्णय तत्काल मामले के उद्देश्यों के लिए सामग्री नहीं है।

19. अधिनियम की धारा 12 के तहत एक आवेदन के संबंध में विशेष विशेषताओं को उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने डॉ. पी.

पद्मनाथन और अन्य। 2 निम्नानुसारः

च

“19. सबसे पहले, इसलिए उन क्षेत्रों की जांच करना आवश्यक है जहां डी. वी. अधिनियम या डी. वी. नियमों ने विशेष रूप से प्रक्रिया निर्धारित की है जिससे अधिनियम की धारा 28 (1) के तहत विचार किए गए आई. डी. 1 के संचालन को बाहर रखा गया है। यह हमें डी. वी. नियमों की ओर ले जाता है।शुरुआत में, यह देखा जा सकता है कि डी. वी. अधिनियम और डी. वी. नियमों के तहत विचार की गई "शिकायत" Cr.P.C के तहत "शिकायत" के समान नहीं है। डी. वी. नियमों के नियम 2 (बी) के तहत एक शिकायत को किसी भी व्यक्ति द्वारा मौखिक रूप से या लिखित रूप में सुरक्षा अधिकारी पर लगाए गए आरोप के रूप में परिभाषित किया जाता है।दूसरी ओर, Cr.P.C की धारा 2 (डी) के तहत एक शिकायत, मजिस्ट्रेट को मौखिक रूप से या लिखित रूप में किया गया कोई भी आरोप है, जिसका उद्देश्य ए.

जी.

एच.

संहिता के तहत कार्रवाई, कि किसी व्यक्ति ने, चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, अपराध किया है।हालाँकि, अधिनियम की धारा 12 के तहत आवेदन पर विचार करने वाले मजिस्ट्रेट को अपराध करने के लिए कार्रवाई करने के लिए नहीं कहा जाता है।इसलिए, जिस पर विचार किया जाता है वह एक शिकायत नहीं है, बल्कि डी. वी. नियमों के नियम 6 (1) में निर्धारित मजिस्ट्रेट के लिए एक आवेदन है।डी. वी. नियमों के तहत शिकायत केवल एक सुरक्षा अधिकारी को की जाती है जैसा कि डी. वी. नियमों के नियम 4 (1) के तहत विचार किया गया है।

20. नियम 6 (1) में कहा गया है कि अधिनियम की धारा 12 के तहत आवेदन अधिनियम में संलग्न प्रपत्र 2 के अनुसार होगा। इस प्रकार, धारा 12 के तहत एक आवेदन जो Cr.P.C की धारा 2 (डी) के तहत परिभाषित एक शिकायत नहीं है, संहिता की धारा 190 (1) (ए) के तहत निर्धारित संज्ञान की प्रक्रिया का संज्ञान लेने के लिए संहिता के अध्याय XV में निर्धारित प्रक्रिया का डी. वी. अधिनियम के तहत कार्यवाही के लिए कोई आवेदन नहीं होगा। दोहराने के लिए, संहिता की धारा 190 (1) (ए) और संहिता के बाद के अध्याय XV में निर्धारित प्रक्रिया केवल मजिस्ट्रेट को दी गई Cr.P.C की धारा 2 (डी) के तहत शिकायतों के मामलों में लागू होगी और अधिनियम की धारा 12 के तहत आवेदन पर नहीं।

ग

डी.

20. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 12 के तहत आवेदन दायर करने को गलत तरीके से शिकायत दर्ज करने या अभियोजन शुरू करने के बराबर माना है।हमारे सुविचारित विचार में, उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए गलती की कि अधिनियम की धारा 12 के तहत आवेदन घरेलू हिंसा के कथित कृत्यों के एक वर्ष की अवधि के भीतर दायर किया जाना चाहिए था।

ई.

21. हालाँकि, यह सच है कि जैसा कि संरक्षण अधिकारी ने अपनी घरेलू निरीक्षण रिपोर्ट दिनांक 2.08.2018 में उल्लेख किया है, 16.09.2008 के बाद लगभग 10 साल की अवधि प्रतीत होती है, जब अपीलार्थी द्वारा पति के खिलाफ कुछ भी आरोप नहीं लगाया गया था।लेकिन यह एक ऐसा मामला है जिस पर निश्चित रूप से मजिस्ट्रेट द्वारा पति से प्रतिक्रिया प्राप्त होने और प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार करने के बाद विचार किया जाएगा।यह एक ऐसी कवायद है जिसे मजिस्ट्रेट द्वारा अपने समक्ष प्रस्तुत किए गए सभी तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार करने के बाद किया जाना चाहिए, जिसमें यह भी शामिल है कि क्या आरोप निरंतर गलत हैं।

च

जी.

22. अंत में, हम अदालत प्रसाद 4 में निर्णय के आधार पर प्रस्तुत करने पर विचार करते हैं।उस मामले में अनुपात तब लागू होता है जब एक मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान लेता है और प्रक्रिया जारी करता है, जिसमें

एच.

मजिस्ट्रेट के पास वापस जाने पर, उपाय संहिता की धारा 482 के तहत याचिका दायर करने में निहित है।अधिनियम की धारा 12 के तहत नोटिस का दायरा प्रत्यर्थी से क़ानून के संदर्भ में प्रतिक्रिया मांगना है ताकि प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करने के बाद, उचित आदेश जारी किया जा सके।इस प्रकार, मामला एक अलग आधार पर खड़ा है और अदालत प्रसाद 4 में कथन उस स्तर पर आकर्षित नहीं होगा जब अधिनियम की धारा 12 के तहत नोटिस जारी किया जाता है।

23. इसलिए हम इस अपील को स्वीकार करते हैं और उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए विचार को दरकिनार करते हैं।सीआरएल। 2018 का ओ. पी. No.28924 तदनुसार खारिज कर दिया जाता है।पति दो सप्ताह के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष अपना जवाब दाखिल करेगा और उसके बाद मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में मामले पर विचार किया जाएगा।

ग

24. हमें यह स्पष्ट करना चाहिए कि हमने तत्काल मामले पर इस दृष्टिकोण से विचार किया है कि क्या अधिनियम की धारा 12 के तहत दिए गए आवेदन पर उच्च न्यायालय द्वारा सीमा की अवधि की गणना के लिए उचित रूप से विचार किया गया था।हमने मामले के गुण-दोष पर कोई विचार व्यक्त नहीं किया है और न ही ऐसा माना जाएगा कि हर स्तर पर स्वतंत्र रूप से विचार किया जाएगा।

डी.

25. इस प्रकार, अपील की अनुमति है।सभी पक्ष अपना खर्च स्वयं वहां करेंगे।

बिभूति भूषण बोस

अपील की अनुमति दी गई।

ई.

(सहायकः राखी, एलसीआरए)

च

जी.

एच.